अध्याय – चतुर्थ

4 विभिन्न उत्सव, नृत्य प्रकार एवं नाटकों में नेवारी संगीत

4.1 विभिन्न जात्रा पर्वों में नेवारी संगीत

4.2 विभिन्न नृत्य में नेवारी संगीत

4.3 नेवारी नाटकों में संगीत

चतुर्थ अध्याय :- विभिन्न जात्रा-पर्वों, नृत्य प्रकार एवं नाटकों में नेवारी संगीत

नेवारी संगीत की मजबूती बनाए रखने में नेवारी जाति में मनाए जाने वाले परंपरागत जात्रा पर्व, त्यौहार तथा मेलें आदि की मुख्य भूमिका रही है ऐसा मानना अनुचित नहीं होगा। इन्हीं परंपराओं के कारण नेवारी संगीत की साधना निरंतर रूप में होती रही है और वर्तमान समय तक उस साधना की प्रस्तुति को हम देख पा रहे हैं और सुन पा रहे हैं। नेवारी संस्कृति में प्रत्येक महीने कोई ना कोई त्यौहार और प्राचीन नेवारी बस्तियों में साल में एक या दो बार मुख्य जात्रा पर्व अनिवार्य रूप में मनाया जाता है। इन जात्रा पर्व की रौनक केवल संगीत की प्रस्तुति से ही संभव है। इसलिए जात्रा हो या त्यौहार पर्व, पहली मान्यता गायन तथा वादन को दी जाती है। त्यौहारों की शुरुआत से अंत तक वाद्यों की गुंज उस स्थान में सुनने को मिलती है। इस गूंज से बाहर रहते आए हुए अन्य नेपाली जाति की प्रजा को भी इस बात की खबर होती है। नेवारी संगीत में उन सभी मौलिक परंपरा, तौर-तरीके, पर्वों का दर्पण देखने को मिलता है। काठमांडू उपत्यका के सभी नेवारी बस्तियों में विभिन्न जात्रा पर्व पूर्व काल से चले आ रहे हैं। इनमें से कुछ स्थानों के जात्रा पर्वों की स्थापना एवं उस में गायन वादन, नृत्य तथा नाटक का महत्व एवं प्रयोग इस प्रकार देखा जा सकता है:

4:1 विभिन्न जात्रा पर्वों में नेवारी संगीत

4:2 विभिन्न नृत्य में नेवारी संगीत

4:3 नेवारी नाटकों में संगीत

4:1 विभिन्न जात्रा पर्वों में नेवारी संगीत

नेवारी परंपरा अंतर्गत नेवारी बस्तियों में अलग अलग तरीके से जात्रा पर्वों को मनाया जाता है| इन सभी पर्वों की अपनी अलग अलग विशेषता एवं जनविश्वाश रहा है। उपत्यका के हरेक छोटे बढ़े स्थानों में जात्रा पर्वों को मनाया जाता है जिसमें नेवारी संगीत का भरपूर प्रयोग देख सकते है। ऐसा माना जा सकता है कि नेवारी परंपरा के कारण ही नेवारी संगीत को जीवंत स्वरूप देने में पूर्ण मदद मिली है। उपत्यका के नेवारी बस्तियों में मनाए जाने वाले कुछ मुख्य जात्रा-पर्व एवं उस में प्रयोग नेवारी संगीत का महत्व एवं प्रयोग इस प्रकार है:

4:1:1 नारायण जात्रा (कहीं नभको जात्रा हाँडीगाउँमा)

काठमांडू में एक पुराना शहर 'हाँडीगाउँ' जिसको 'नर' नाम से भी जाना जाता है। यह शहर प्राचीन किरांत तथा लिच्छवि काल से ही प्रख्यात माना जाता है। इस नगर को सत्ययुग में विजयपुर नाम से जाना जाता था ऐसा अनुमान है। यह एक छोटा नगर है परंतु धार्मिक स्थल, पारंपरिक संस्कृति एवं दाफा संगीत से भरपूर स्थल है।

इस शहर में दशैं(दशहरा) के समय कौलाश्व(कोजागरी) पूर्णिमा के एक दिन बाद 'नरनारायण जात्रा' मनाई जाती है। जिसको 'कहीं नभको जात्रा हाँडीगाउँमा' कहते हैं। यह कथा के रूप में भी पूरे नेपाल में प्रख्यात है। "इस जात्रा पर्व के पीछे एक आख्यान माना जाता है कि प्राचीन समय में हाँडीगाउँ के राजा की महारानी गर्भवती थी और उसी समय उनकी सखी भी गर्भावस्था में थी। सखी से प्रसूति के विषय में चर्चा कर रहे थे। महारानी की सखी ने कहा कि प्रसूति के समय भगवान नारायण के आशीर्वाद से बच्चे का जन्म आराम से होता है। उसी समय महारानी आवेश में आकर कहने लगी कि बच्चे को जन्म देने में कोई भगवान के सहारे की जरूरत नहीं होती। इस बात को नारायण भगवान सुन लेते हैं और गुस्से में आ जाते हैं। समय आने पर महारानी की सखी की प्रसूति आराम से हो जाती है परंतु महारानी का समय आने पर भी बच्चे का जन्म नहीं होता इतना ही नहीं बल्कि उस नगर की जितनी भी गर्भवती महिलाएं थी उनके बच्चे नहीं हुए। बारह साल बीत गए फिर भी बच्चों का जन्म ना होने से संपूर्ण नगर के लोग एवं देवलोक में भी इस विषय में चर्चा होने लगी। चिंतित देवलोक के संपूर्ण देवता शीघ्र ही एक ज्योतिषी के पास जाकर इसका कारण ढूंढने लगे।

ज्योतिषी के कथन अनुसार भगवान नारायण विजयपुर की महारानी की बात से खुद को अपमानित समझ कर रूठ कर हिमालय पर्वत में तपस्या में लीन होकर बैठे हैं, ऐसा प्रतीत होता था। भगवान नारायण के श्राप के कारण विजयपुर की महारानी एवं उस नगर की संपूर्ण गर्भवती महिलाओं का प्रसव रुका हुआ है ऐसी बात ज्योतिषी बताते हैं। तत्पश्चात भगवान नारायण को मनाने के लिए समग्र देवतागण हिमालय पर्वत जाके विनम्र अनुरोध करते हैं परंतु उसका कोई असर नहीं होता। तभी भगवान विश्वकर्मा भगवान नारायण को आश्वासन देते हैं कि आपको इस संसार में अद्भूत सिंहासन(खट) में विराजमान करके, फूलों से आपके सिंहासन सजा के, जो इस संसार में दुर्लभ है ऐसी विचित्र सवारी और विभिन्न बाजा गाजा के साथ आपको नेपाल मंडल में भ्रमण कराने का प्रबंध कराते हैं। विश्वकर्मा की यह बात सुनकर नारायण भी आश्चर्यचकित हो जाते हैं और इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हैं।

नारायण भगवान की अनुमति मिलने के बाद विश्वकर्मा ने तीन मंजिल के गोलाकार सिंहासन का निर्माण किया और उसके गजूर(मंदिर के सबसे ऊपरी भाग गुंबत) को उल्टा रखकर नीचे से रस्सी की सहायता से उसको घुमा(जैसे पृथ्वी के धुरिभ्रमण की तरह) सके ऐसा संकेत दिया गया। सबसे ऊपर सफेद कपड़ो से लपेट कर भगवान नारायण को विराजमान करके हिमालय पर्वत का संकेत दिया गया। फिर उसके नीचे हराभरा धूपी के फूलों से सजाकर, माहाभारत पर्वत के रूप में दर्शाया और गोलाकार घट में स्वर्ण फूल(पीला रंग के फूल जिसे मौम से बनाया जाता है) जो किसी लोक में नहीं खिलता इस तरह आकर्षक ढंग से निर्माण कर के विभिन्न बाजा गाजा के साथ संपूर्ण देवी देवताओं ने मिलकर नारायण भगवान की आराधना की और उनको आगमन के लिए प्रार्थना करते हैं।

नारायण भगवान विश्वकर्मा के यह कार्य को देखकर अत्यंत प्रसन्न होते हैं और नेपाल मंडल में सवार होते हैं। उसी समय रुके हुए इस 'नर' नगर की संपूर्ण महिलाओं का प्रसव शुरू होता है और पुनः सृष्टि के नियम सूचारु रूप से संचालन होना प्रारंभ होते हैं।"[1] इसी खुशहाली के अवसर की याद में हाँडीगाउँ में इस जात्रा का आयोजन किया जाता है जो वर्तमान में भी निरंतर पाया जाता है। इस जात्रा में विभिन्न वाद्य जैसे धिमे, खिं, भुस्या, तीनछुक, बैंड बाजा आदि का प्रयोग होता है। उस नगर के प्रत्येक दाफा समूह अपने अपने वाद्यों को बजाकर नगर परिक्रमा में हिस्सा लेते हैं। इस जात्रा की शुरुआत करने के लिए उसी नगर के पँय्ता खलक(एक समूह) को अनिवार्य रूप में प्वंगा बाजा(सुषिर वाद्य) मूल खट(सिंहासन) के सामने बैठकर बजाना होता है तभी जात्रा का शुभारंभ होता है। इससे यह कह सकते हैं कि नेवारी परंपरा और नेवारी संगीत दोनों एक दूसरे के साथ बंधे हुए हैं। नेवारी संस्कृति एवं पर्वों की निरंतरता होना ही नेवारी संगीत को जीवित रखता है।

4:1:2 इन्द्र जात्रा

नेपाल में नेवारी जाति की घनी बस्ती के मुख्य स्थान है काठमांडू, भक्तपुर और ललितपुर। इन तीनों क्षेत्रों में रीति-रिवाज, परंपरा, जात्रा, त्यौहार भी ज्यादा मनाए जाते हैं। इन सारे जात्रा, त्यौहार में से काठमांडू का एक प्रमुख त्योहार है इन्द्र जात्रा। इन्द्र जात्रा की परंपरा नेपाल में उत्तर प्राचीन काल अर्थात् 14 वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुई होगी ऐसा माना गया हैं और इसका उल्लेख गोपालराजवंशावली में पाया गया है। भक्तपुर तौमढी टोल स्थित नेपाल संवत् 561 के शिला अभिलेख में भी इंद्र जात्रा के बारे में उल्लेख प्राप्त होता है।[2] काठमांडू तेबहाल(स्थान) में एक स्थित अभिलेख में सूर्य को इंद्रदेव की संज्ञा दी गई है और इस तरह सूर्यदेव के प्रतीक के रूप में इंद्रदेव की जात्रा मनाई जाती है। इस जात्रा

1. डंगोल टेक बहादूर/साक्षात्कार/ हाड़ी गाउँ काठमांडू/ Dt.: 20/10/2018

2. शाक्य रेखा, डंगोल शरण/ जीवंत संस्कृतिहरू/ p-151

को आठ दिनों तक मनाया जाता है। यह जात्रा काठमांडू के साथ-साथ ललितपुर एवं भक्तपुर में भी मनाई जाती है। इंद्रजात्रा त्यौहार के विषय में ऐसा कथन है कि "प्राचीन समय में इंद्रदेव की माता को उपवास के लिए पारिजात फूल की आवश्यकता हुई जो मिलना असंभव था। इसलिए स्वयं इंद्रदेव इस काठमांडू उपत्यका में पारिजात फूल की चोरी करने आए और चोरी करके भागने के क्रम में यहां के लोगों ने उनको बांध के रखा। इस तरह इंद्रदेव बहुत देर तक स्वर्गलोक वापस नहीं लौटे, इसलिए स्वयं इंद्र देव की माता अपने पुत्र को ढूंढने के लिए पृथ्वी लोक पर आई और बाद में इंद्रदेव को ढूंढने के लिए उनके पिता भी दीया जला के पृथ्वी लोक पर उतर आए। इस तरह इंद्रदेव के संपूर्ण परिवार का पृथ्वी लोक पर आने की खुशी में उस समय के लोग उस उपत्यका में बहुत ही आकर्षक ढंग से यह जात्रा मनाने लगे जो वर्तमान में भी निरंतर पाई गई है।"(1)

इस जात्रा का मुख्य आकर्षण जीवित देवी कुमारी, गणेश और भैरव रथ जात्रा है। उसके साथ साथ मजिपात लाखे नाच, हल्योक(स्थान) के आकाश भैरव(स्वः भक्कु) नाच, किलागत(स्थान) के पूलुकिसी नाच, देवी नाच, दांगी, बौमत भी मुख्य आकर्षण का केंद्र है।

सर्वप्रथम जात्रा को प्रारंभ करने के लिए भक्तपुर के नाला यसिंखेल स्थान में जाकर विधिवत पूजा अर्चना करके गुरजू पलटन वाद्य वादन के साथ अश्विन मास में कायाष्टमी के दिन आते हैं और ञ्लाथ्वः द्वादशी के शुभ मुहूर्त संकेत दिखा के हनुमान ढोका के सामने इंद्रध्वज खड़ा करते हैं। जिसे नेवारी में 'यः सिं ढंकेगु' कहते हैं। इसी इंद्रध्वज में इंद्रदेव की प्रतिमा है ऐसा मानते हैं। उसी दिन फूल चुराने आए हुए इंद्रदेव की मूर्ति को प्रदर्शित करते हैं। इस दिन जिसे नेवारी भाषा में "इन्द्राद्यः त्वयेगु" कहते हैं, उसे विशेष रूप में मरू(स्थान) के चार रास्तों पर विशेष रूप से भक्तजन पूजा अर्चना के साथ साथ अपने दिवंगत परिवार जनों को सुख शांति मिले ऐसी कामना करते हैं। तत्पश्चात दिनभर 108 दियों को जलाते हैं। इसी दिन टोल समुदाय के प्रांगण में समूह में बैठकर भजन कीर्तन गाने की परंपरा रही है और कुछ समूह अपने पारंपरिक गाजा एवं बाजा के साथ काठमांडू उपत्यका जहां पर जात्रा की परिक्रमा की जाती है उस स्थान में श्रद्धापूर्वक परिक्रमा करते हैं।

इंद्र जात्रा में बहुत सारे उत्सव होते हैं जैसे रथयात्रा जो मुख्य है, उसके बाद पूलुकिसी नाच, लाखे नाच, आकाश भैरव(स्वः भक्कु), दांगी जात्रा, बौमत, दश अवतार, महाकाली नाच, हाथु द्यः प्रदर्शन एवं अन्य उत्सव होते हैं। जिससे इस जात्रा को भव्यतापूर्ण संपन्न करते हैं और यही जात्रा के मुख्य आकर्षण है।

---

1. शाक्य, सुवर्णा / यँयाः इंद्रजात्रा / p-8

पूलुकिसी नाच के बारे में यह कथन है कि इंद्रदेव सफेद हाथी पर चढ़कर पारिजात फूल को चुराने आए थे उसी हाथी के स्वरूप को पूलुकिसी नाच माना जाता है।

दूसरी जात्रा है 'दांगी जात्रा', जिसमें दांगी का अर्थ होता है इंद्रदेव। इस जात्रा का यह कथन है कि जब इंद्रदेव वापस नहीं आए थे तभी उनकी माता श्री पृथ्वीलोक पर आकर स्वयं इंद्रदेव को ढूंढने के क्रम में इस जात्रा में शामिल हो गई। उनका स्वरूप सफेद मुकुट पहना हुआ था। इंद्र को ढूंढने केवल माता ही नहीं किंतु उनके पिता भी पृथ्वीलोक पर आए थे ऐसी कथा प्रचलित है। इंद्रदेव के पिता को 'बौमत' कहा गया है और बौमत अपने पुत्र को दिया जला के ढूंढने आते हैं। उसी कथन के आधार पर इस यात्रा में भी एक पिरामिड आकार के सिंहासन के पीछे 32 हाथ जितना लंबा दूसरा सिंहासन बनाकर उसमें दियों को जलाकर नगर परिक्रमा करके यह जात्रा को संपन्न किया जाता है।

इस जात्रा की शुरुआत से लेकर अंत तक नेवारी परंपरागत वाद्य नायखिं, धिमें, भुस्या तथा नेपाली सेना के बाजा, पंचे बाजा, गुरजू पलटन आदि को अनिवार्य रूप में सम्मिलित किया जाता है।

4:1:3 गाई जात्रा

गाई जात्रा भाद्र कृष्ण प्रतिपदा से अष्टमी तक आठ दिन तक मनाई जाती है। यह जात्रा मुख्यतः दिवंगत परिजनों की याद में मनाई जाती है। इस जात्रा के साथ साथ प्रहसन, सामाजिक विकृतियों का व्यंगात्मक प्रदर्शन, नाचगान तथा रामायण के करुण रस के गीत भी गाए जाते है। गाई जात्रा पर्व काठमांडू, ललितपुर, भक्तपुर के साथ साथ काभ्रे, मकवानपुर, सिंधुपाल्चोक, नुवाकोट, दोलखा, खोटाङ, भोजपुर, इलाम, सुनसरी, मोरङ, पर्सा, कास्की, पाल्पा, दाङ आदि जिलों में भी मनाई जाती है।

गाई जात्रा के दिन एक साल के अंदर दिवंगत हुए परिजनों एवं रिश्तेदार की याद में गाय अथवा कोई व्यक्ति को गाय के रूप में श्रृंगार करके अपने अपने नगरों में परिक्रमा करवाते हैं। दिवंगत व्यक्तियों के नाम से नगर परिक्रमा में आए हुए उन गाय व्यक्तियों को दूध, फल, रोटी, पोहा दही के साथ अन्न तथा दक्षिणा दान दी जाती है। इस प्रकार नगर परिक्रमा करने से दिवंगत आत्मा गाय की पूछ के सहारे वैकुंठ धाम में प्रवेश करते हैं ऐसी मान्यता से यह पर्व को मनाया जाता है।

"गाई जात्रा परंपरा मनाने की शुरुआत मध्यकाल में राजा प्रताप मल्ल के समय से हुई है। प्रताप मल्ल के पुत्र के मृत्यु शोक से उनकी रानी अत्यंत दुःखी हो गई थी। अपनी रानी को इस दुःख से मुक्त करने के लिए और जनता के घरों में भी ऐसे ही दुःखों को विचार में रखकर दिवंगत आत्मा के नाम से गाय को नगर परिक्रमा कराने की परंपरा चालू की। इतने से भी अपनी रानी का मन शांत ना होने की वजह से विभिन्न प्रकार के प्रहसन तथा व्यंग्यात्मक कार्यक्रम करने का आदेश भी दिया और उसी आदेश का अनुसरण करके हास्यव्यंग्य का प्रचलन शुरू हुआ ऐसी जनश्रुति पाई जाती है।"[1]

1. https://www.londonnepalnews.com/ Dt: 04/08/2020

4:1:4 कीर्तिपुर की परंपरागत जात्रा

कीर्तिपुर नेपाल के ऐतिहासिक क्षेत्रों में से एक है जो काठमांडू जिला, बागमती अंचल, वर्तमान में क्षेत्र नंबर 10 अंतर्गत आता है। कीर्तिपुर स्थान नेवारों की बस्ती है जिसमें 2011 की जनगणना के आधार पर 67,171 लोगों का निवास है। कीर्तिपुर को नेवारी भाषा में 'किपू' से संबोधित किया गया है। वर्तमान में नेपाल की सबसे बड़ी यूनिवर्सिटी 'त्रिभुवन विश्वविद्यालय' कीर्तिपुर में स्थित होने से पूरे नेपाल में इस स्थान का प्रचार प्रसार अधिक है।

वर्तमान में ही नहीं किंतु प्राचीन समय से अपना अलग ही इतिहास का प्रभाव इस स्थान में है। यहां के लोगों का मुख्य पेशा खेती है। अन्य नेवारी स्थानों की तरह कीर्तिपुर में भी अपनी ही जात्रा परंपरा, त्यौहार मनाए जाते हैं। इन जात्रा पर्व में बजाए जाने वाले नेवारी वाद्य संगीत का भी प्रबल प्रभाव रहा है। वर्तमान में यह परंपरा निरंतर चली आ रही है जो गौरव की बात है। विभिन्न पर्वों में से कीर्तिपुर की इंद्रायणी रथ यात्रा एक प्रचलित जात्रा पर्व है। यह प्राचीन काल से चली आ रही जात्रा है जिसे प्रत्येक वर्ष उत्साह एवं उमंग के साथ मनाई जाती है। इस जात्रा पर्व में कीर्तिपुर में जितने भी दाफा समूह तथा वाद्य वादन समुदाय है उन सभी को इस यात्रा में सम्मिलित किया जाता है।

कीर्तिपुर इंद्रायणी जात्रा प्रत्येक वर्ष मार्गशिर माह में थिलाथ्वं दशमी के दिन मनाई जाती है। यह जात्रा मनाए जाने के पीछे यह जन कथा है कि "प्राचीन समय में इस बस्ती में एक लाखे(राक्षस) हर दिन इस बस्ती के एक व्यक्ति को खा जाता था। इसके साथ-साथ एक अन्य जानवर का मांस, चावल से बनी हुई मदिरा उसे देनी पड़ती थी। एक दिन एक छोटे से परिवार की बारी आई जिसमें एक वृद्ध पुरुष और महिला रहते थे। वह दोनों आपस में राक्षस के पास उसका भोजन बनने के लिए कौन जाएगा ऐसी चर्चा चल रही थी। वृद्ध पुरुष और महिला दोनों पहले जाने के लिए आपस में बहस कर रहे थे। संयोग से उसी दिन उसी घर में एक अनजान युवक मेहमान के तौर पर रात गुजारने के लिए रुका हुआ था। वह युवक उनकी सारी बातें सुन रहा था और सुनने के बाद उस युवक ने दोनों पुरुष एवं स्त्री को जाने के लिए मना कर दिया। और वह खुद सारा खाद्यान्न लेकर राक्षस के पास जाता है। जब वहां पर राक्षस आता है तो युवक राक्षस के सामने यह शर्त रखता है कि वह सारी चीजें खाने से पहले राक्षस को युवक से लड़ना पड़ेगा। फिर राक्षस और युवक दोनों के बीच लड़ाई होती है और अंत में उस युवक की जीत होती है। तत्पश्चात पता चलता है कि वह युवक एक राजकुमार था। उस समय से राक्षस से मुक्ति दिलाने की खुशी में यह स्थान पर जात्रा पर्व की शुरुआत हुई ऐसा माना जाता है।"[1]

1. महर्जन, श्रीकृष्ण/ किपूचा इंद्रायणी जात्रा/ p-4

इंद्रायणी जात्रा पर्व में नेवारी संगीत की मुख्य भूमिका होती है। जात्रा पर्व के प्रारंभ से लेकर अंत तक विभिन्न वाद्य बजाए जाते हैं। कीर्तिपुर के समग्र दाफा समूह में एक ही ग्वारा गाई जाती है। जिसमें इंद्रायणी माता के गुण गाए जाते हैं जो इस प्रकार है[1]:

सकल ग्वारा (सकल राग)

हादे सकल निपति सुंदर

सुंदर परमेश्वर

हादे दान भूखन का

हादे सकल निधनि नि देव

ध्वसा (ताल: जति)

माई इंद्रायणी देवी मायी रण सुख धारने

सुर धारने।

माई आनंद भरीपुणी सुख धारणी

राजा के है नोहर।।

ताल: ग्रह

माई अनंतपुरी पुरी

है पद्माकस्त भागे।।

माई भैरव व्याग्र रूप

पपति विज्याक।।

इस ग्वारा के शब्दों में एक दाफा समूह से दूसरे दाफा समूह में कुछ-कुछ भिन्नता पाई गई हैं।

4:1:5 चार लोकेश्वरनाथ जात्रा पर्व

नेवार जाति की पहचान उसकी भाषा, संस्कार, लिपि, संस्कृति, त्यौहार पर्व, जात्रा के कारण है और उसीकी वजह से नेवार जाति पूरे नेपाल में उच्च स्थान पर स्थित है। जात्रा, पर्व, त्यौहारों का प्राण ही नेवारी संगीत है। नेवारी संगीत में ही इन सारे पर्वों का आकर्षण छुपा हुआ है। "प्राचीन काल से ही विभिन्न घटनाओं के आधार पर कालांतर में विभिन्न जात्रा पर्वों की शुरुआत हुई। उसी घटना प्रसंग में नेवारी कथन अनुरूप इस पृथ्वी पर पूरे 360 लोकेश्वर भगवान का वास है। जिसकी वजह से इस संसार की अभी तक सुरक्षा एवं संरक्षण हो रहा हैं।"[2] उन 360 लोकेश्वर भगवान में से मुख्य चार लोकेश्वर

---

1. मानत्वाः दाफा खलः/ किपू – 10/ p-13

2. शाक्य रेखा, डंगोल शरण/ जीवंत संस्कृतिहरू/ p-13

भगवान के नेवारी समाज में प्रत्येक वर्ष हर्ष उल्लास के साथ जात्रा पर्व मनाए जाते हैं। उन चारों लोकेश्वर भगवान का नाम और स्थान निम्नलिखित है:

1) श्री सृष्टिकांत लोकेश्वर सेतो(सफेद) वर्ण के होते है। जो नाला(नेपाल भाषा में नाला न्वहं) स्थान में विराजमान है। चिल्लागा पारू अर्थात् फागु पूर्णिमा के दिन जात्रा सम्पन्न की जाती है। ऐसा माना जाता है कि सृष्टिकांत लोकेश्वर ने ही इस संसार को चलाने के लिए विभिन्न देवी-देवताओं की रचना करके अपना कार्यभार उन्हें सौंप दिया। इसलिए उनको सृष्टिकांत लोकेश्वर कहा गया। हिंदू और बौद्ध जाति अपने अपने अलग रूप में मानते हैं। हिंदू धर्मावलंबी नारायण भगवान के रूप में और बौद्ध धर्मावलंबी करुणामय के स्वरूप में उन्हें पूजते हैं।

2) रक्तार्यावलोकितेश्वर/ करुणामय रातो(लाल) वर्ण के होते हैं जो ललितपुर बुङ्गमती नामक स्थान में विराजमान है। बछलाथ्व पारू अर्थात् वैशाख प्रतिपदा के दिन विशेष रथ करीब तेरह मंजिल(तल्ला) का निर्माण करके जात्रा संपन्न की जाती है। यह जात्रा पर्व पाटन जिला का मुख्य पर्व है। लोकेश्वर करुणामय भगवान के नेपाल आगमन के विषय में यह ज्ञात है कि उन्हें प्राचीन समय में गोपाल राजवंशावली के समय भक्तपुर के राजा नरेंद्र देव और आचार्य बंधुदत्त द्वारा कामरूप(स्थान) से लाया गया था। किवदंती के अनुसार उस समय बारह वर्षों तक बारिश ना होने की वजह से देश में अकाल होने लगा था। उस अस्त-व्यस्त वातावरण को अनुकूल करने के लिए करुणामय भगवान को नेपाल देश(काठमांडू) में लाया गया था।

3) श्री आर्यावलोकितेश्वर जो सेतो(सफेद) वर्ण के होते हैं और काठमांडू जनबहाल में विराजमान है। "मल्लकाल के राजा यक्ष मल्ल के समय में कनक चैत्य महाविहार में श्री आर्यावलोकितेश्वर(सेतो मछिंद्रनाथ) की मूर्ति की स्थापना की ऐसा प्रमाण प्राप्त होता है। तथापि उक्त मूर्ति की कला के अनुसंधान की प्राचीन समय के लिच्छवि काल में पुष्टि की गई है।"[(1)] श्री आर्यावलोकितेश्वर की जात्रा चैत(चैत्र) शुक्ल अष्टमी(चैत दशैं) में शुरू करके पूर्णिमा तक संपन्न की जाती है। जात्रा के लिए रथ का निर्माण नेवार की विभिन्न जातियां मिलकर बत्तीस हाथ की लंबाई वाला रथ निर्माण करते हैं। जिसमें चार पांग्रा (चक्र-पहिया) लकड़ी के बने होते हैं और रथ में आगे की तरफ एक लंबा लकड़ी को जोड़ दिया जाता है, जिसे नाग(घः माः) का प्रतीक माना जाता है।

इस मूर्ति की स्थापना के संबंध में एक किवदंती के अनुरूप एक किसान अपने खेत में काम करता है उस समय ज़मीन में से उसे एक मूर्ति मिलती है और अपने अन्न के भंडार में उसने वह मूर्ति छिपा दी।

---

1. शाक्य रेखा, डंगोल शरण/ जीवंत संस्कृतिहरू/ p-35

भगवान की कृपा से किसान के भंडार कभी खाली नहीं हुए। किसान इस दृश्य को देखकर उक्त मूर्ति के अन्नदाता भगवान के रूप में मानकर जनबहाल स्थान में स्थापित करते हैं जो आज भी वहा विराजमान है।

4) आदिनाथ लोकेश्वर जो रातो (लाल) वर्ण के होते हैं और काठमांडू के चोभार में स्थापित है। चारों करुणामय भगवान में से आदिनाथ लोकेश्वर की जनमानस में एक अलग ही विशेषता एवं महिमा रही है। आदिनाथ लोकेश्वर की जात्रा प्रत्येक वर्ष चैत्र मास के चौलाथ्व अष्टमी और नवमी के दिन संपन्न की जाती है। आदिनाथ की सेवा एवं दर्शन करने से रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है ऐसा जनविश्वास है। इसलिए प्रत्येक वर्ष कार्तिक पूर्णिमा से एक माहा का मेला लगता है और विभिन्न स्थान से दाफा संगीत समूह एवं जनमानस प्रत्येक दिन दर्शन करने जाते हैं।

इन चारों लोकेश्वर भगवान को नेवारी बस्ती के अलग-अलग जिल्ला स्थानों में अपनी परंपरा अंतर्गत भव्यतापूर्ण जात्रा पर्व मनाए जाते हैं। हिंदू धर्म के लोग नारायण के रूप में और बौद्ध धर्म के लोग करुणामय के स्वरूप में मानने वाले भगवान के पर्वों को प्रति वर्ष उत्साह, उमंग और श्रद्धापूर्वक अपने स्थान के प्रत्येक वाद्य वादन तथा दाफा भजन समूह की सहभागिता से संपन्न किए जाते है। जात्रा पर्व शुरू होने से कुछ समय पहले ही वाद्यों की साधना की जाती है। जात्रा पर्व में शुरुआत से लेकर अंत तक नेवारी संगीत की भूमिका उच्च होती है। रथ की परिक्रमा, रथ को उठाने में कहीं विश्राम देने के लिए वाद्यों की ध्वनि से ही इशारा एवं बल प्रदान करता है। यात्रा अवधि तक उस स्थान को गूंजयुक्त और रौनक प्रधान संगीत गाया-बजाया जाता है। जात्रा पर्व में रथ की यात्रा में ही नहीं किंतु जिस स्थान में जात्रा है उस स्थान के संपूर्ण संगीत समूह, दाफा समूह, भजन समूह प्रातः एवं सायं काल में निश्चित स्थान पर बैठकर ईश्वर की आराधना करते हैं, जिसमें गायन तथा वादन दोनों की उपस्थिति रहती है।

4:2 विभिन्न नृत्य में नेवारी संगीत

नेवारी संगीत परंपरा में नृत्य को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। नेवारी परंपरा एवं पर्वों के अनुसार हरेक नेवारी बस्ती में समय समय विभिन्न प्रकार के देव नृत्यों को प्रस्तुत किया जाता है। इस परंपरा को वर्तमान समय में भी देख सकते है। नेवारी संगीत के इन नृत्य प्रकारों को अलग-अलग शैली, भिन्न भिन्न प्रस्तुतीकरण से देख सकते है। नेवारी बस्तियों में प्राचीन समय से प्रचलित सभी नृत्य में गायन तथा वादन की मुख्य भूमिका रहती है। उपत्यका में प्रचलित विभिन्न नृत्य प्रकार में से कुछ प्रचलित मुख्य नृत्य प्रकार इस प्रकार है:

4:2:1 कात्ती प्याखँ (नृत्य)

नेवारी संगीत में गायन और वादन के साथ साथ नृत्य को भी महत्व दिया गया है। प्राचीन काल से गायन और वादन को विभिन्न नाटकों में, विभिन्न नृत्यों में प्रयोग में लिया गया है। "काठमांडू उपत्यका के ललितपुर जिला में प्रत्येक वर्ष परंपरागत शास्त्रीय और लोक नृत्य कात्ती प्याखँ दिखाई जाती है जो आज से सोलह सौ वर्ष पहले नेपाल मंडल में राजा मानदेव के समय में रत्नसंघ के शिलालेख में प्राप्त है। जिसमें आज के ललितपुर को दूपग्राम क्षेत्र प्रदेश कहा गया है। रत्नसंघ ने 200 पि(1,095,2005 square feet) ज़मीन चौदहवीं शताब्दी मे दान में देकर गुथि(संस्था) का निर्माण किया था। उसके बाद मल्लकालीन समय चौदहवीं शताब्दी(वि.सं. 1423-1452) में भक्तपुर के राजा जयस्थिति मल्ल के समय में ललितपुर, भक्तपुर राज्य के अधीन में था। ललितपुर के एक शक्तिशाली महापात्र 'जयसिंह' ने ललितपुर प्रदेश को भक्तपुर राज्य से आज़ाद किया। इसी खुशियाली के अवसर पर एक विद्वान नाटककार की सहायता से संस्कृत भाषा में लिखा हुआ 'रामाङ्कनाटिका' ग्रंथ की सहायता से नाटक महोत्सव मनाया गया। उसके बाद नेपाल संवत् 750-757(1629 ई. सं.) में राजा सिद्धनरसिंह के शासनकाल में ललितपुर नगर में विभिन्न मंदिरों के निर्माण पूर्ण होने के बाद कार्तिक माह में कृष्णचरित्र पर आधारित कात्ती प्याखँ नृत्य पांच दिन तक प्रदर्शित किया गया।"[(1)] यही नृत्य एवं नाटक परंपरा की विभिन्न काल में समय अवधि कम ज्यादा होने लगी थी। किसी काल में एक माह तक भी प्रदर्शित हुआ था परंतु वर्तमान में एक सप्ताह तक का व्याख्यान दिखाया जाता है।

कात्ती नृत्य का कार्तिक महीने में प्रस्तुतीकरण किया जाता है इसलिए भी इस नाच को कात्ती नृत्य के नाम से जाना गया होगा ऐसा मानना है। इस नाच को पूरे देश की ऐतिहासिक धरोहर के रूप में ले सकते हैं, जो राजा सिद्धिनरसिंह मल्ल के राज्य काल से निरंतर चली आ रही है। राजा सिद्धिनरसिंह मल्ल एक धार्मिक सहिष्णु वैष्णव धर्म के अनुयाई राजा थे। इसलिए उन्होंने कात्ती नृत्य में कृष्ण भगवान के अनेक अवतार दिखाने में प्रोत्साहित किया होगा। प्राचीन समय से ही प्रचलित हरि, विष्णु या कृष्ण के कई अवतरण के रूप में प्रदर्शन करते आए हुए कात्ती नृत्य वर्तमान समय में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है[(2)]:

---

1. श्रेष्ठ, हरिमान/ कात्ती प्याखँ/ p-क

2. राजभंडारी, सुनिता/ कात्ती प्याखनय् नृसिंह अवतार/ p-27

महिना और तिथि	**प्याखं (नृत्य)**
कार्तिक शुक्लपक्ष चौथी	सुदामा बाय् भक्त सूरदास – कृष्ण अवतार
कार्तिक शुक्लपक्ष पंचमी	बाथः प्याखं
कार्तिक शुक्लपक्ष षष्ठी	उषाहरण लीला बाय् माधवानर लीला
कार्तिक शुक्लपक्ष सप्तमी	उषाहरण लीला बाय् माधवानर लीला
कार्तिक शुक्लपक्ष अष्टमी	उषाहरण लीला बाय् माधवानर लीला
कार्तिक शुक्लपक्ष नवमी	उषाहरण लीला बाय् माधवानर लीला
कार्तिक शुक्लपक्ष दशमी	उषाहरण लीला बाय् माधवानर लीला
कार्तिक शुक्लपक्ष एकादशी	जलशयन – मधु – कैटव वध
कार्तिक शुक्लपक्ष द्वादशी	वराह अवतार – हिरण्याक्ष वाढ
कार्तिक शुक्लपक्ष त्रयोदशी	नृसिंह अवतार – हिरण्यकशपू वध
कार्तिक शुक्लपक्ष चतुर्दशी	दधि लीला – कृष्ण अवतार
कार्तिक शुक्लपक्ष पूर्णिमा	वस्त्र हरण बाय् बौद्ध अवतार – कृष्ण अवतार

कात्ती प्याखं में विभिन्न रागों पर आधारित गीतों का प्रयोग किया जाता है। गायन की संगत में विभिन्न पारंपरिक वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। कुछ रागों के नाम कुछ इस प्रकार है[1]:

1. राग गौरी
2. राग माल
3. राग मंगल
4. राग धनाश्री
5. राग भूपारी
6. राग कौशी
7. राग काफी
8. राग पहरिया

1. राजभंडारी, सुनिता/ कात्ती प्याखनय् नृसिंह अवतार/ p-65

9. राग पहरिया मंजरी
10. राग मल्हार
11. राग मालव
12. राग वसंत
13. राग निस्ताङ्ग
14. राग श्री
15. राग कन्ह
16. राग वेलावल
17. राग केदार
18. राग विभास
19. राग सारंग
20. राग तनवेलावल
21. राग धनार्सि
22. राग देवर्गी
23. राग जयर्सि
24. राग गुन्द
25. राग विजमारसी
26. राग रंग
27. राग गुजरी
28. राग आशावरी
29. कामोद
30. राग स्वाबेलागु
31. राग नाट
32. राग वर्लारी

कात्ती प्याखं नृत्य में प्रयुक्त कुछ ताल इस प्रकार है:

1. ताल यक
2. ताल चो
3. ताल ज

4. ताल अस्ता
5. ताल य
6. ताल प्र
7. ताल तिमा
8. ताल झपताल

- कात्ती प्याखं में अधिकतर ताल 'चो' का प्रयोग किया गया है।

कात्ती प्याखं नृत्य में प्रयुक्त कुछ गीत इस प्रकार है[1]:

श्री नृसिंह अवतार का गीत:

जय जय नरहरि देव रे सकल भुवन में व्यापित रूप ।।
रवि शशि नयन वदन विराजित धवल तनु छवि भासे ।।
पदय दहन समभासे भगत प्रल्हाद उद्धार किय ।। १।।

वराह अवतार का गीत:

म्ये - ।।राग - गौरी।। ।।ताल - चो।।

अजम गिरीसम तनुदित भेस ।।
धवल दन्त धरि सुंदर केस ।।१।।
कोति सुर्ये छवि वदन सुवेस ।।
वराह रूपलिए शोभे परवेस ।।२।।

सुदामा नाटक का गीत:

म्ये - ।।राग - धनाश्री।। ।।ताल - चो।।

हा दे सुदामान मन तय गम नस बास ।।
दासिदामा तोलाताव काय रामया नाम ।।१।।
हा दे बन बन कथकव क्वाक पंकन जुल ।।
लोकनाथ्या श्री निवास शरण बने ।।२।।

बौद्ध अवतार का गीत:

म्ये - ।।राग - विभास।। ।।ताल - चो।।

अब भलो कलीजुग पाप आचार ।।

---

1. श्रेष्ठ, हरिमान/ कात्ती प्याखँ/ p-8, 270, 282, 311

लोकहित रह बुद्ध अवतार ।।
पसुहिंसा निवारण करव पचाने ।।
राज्यप्रकास नृप कहत विचारे ।।१।।

भावार्थ:

कात्ती नाच में भगवान के विभिन्न अवतार के विषय में विभिन्न रागों में निबद्ध अलग-अलग रचनाएं गाई जाती है। इस नृत्य में गायन तथा वादन का भरपूर प्रयोग किया जाता है। सर्वप्रथम नृसिंह अवतार की गाए जाने वाली रचना राग विजय में निबद्ध है जो चो ताल में है। यह रचना हिंदी भाषा में है जिसमें नृसिंह अवतार के बारे में चर्चा की गई है। प्रहलाद जो हरि भक्त थे उनका उद्धार करने का विवरण दिया गया है।

इसी तरह दूसरी रचना वराह अवतार की है। यह रचना राग गौरी तथा ताल चो में निबद्ध है। इस गीत में वराह अवतार की सुंदरता से चर्चा की गई है।

तीसरी रचना सुदामा के नाटक में गाए जाने वाली रचना है जो राग धनाश्री तथा ताल चो में निबद्ध है। कृष्णा और सुदामा की लीला प्रख्यात मानी जाती है। यह एक लोकप्रिय आख्यान माना जाता है। जो कात्ती नृत्य में भी शामिल किया गया है। इस रचना को मल्ल राजा श्री निवास मल्ल द्वारा लिखा गया है।

चौथी रचना बौद्ध अवतार के विषय में है। यह रचना राग विभास तथा ताल चो में निबद्ध है। बौद्ध अवतार में गाए जाने वाले इस गीत में कलियुग में फैले हुए पाप आचरण को बुद्ध ने कैसे निवारण किया उसकी बात की गई है। इस तरह कात्ती नृत्य धार्मिक प्रवृत्तियों की नृत्य परंपरा है। जिसमें केवल भक्ति रस ही देखने को मिलता है। विद्वानों का मानना है कि ललितपुर के राजा सिद्धिनरसिंह ने अपनी जनता में धार्मिक प्रवृत्ति को बनाए रखने के लिए जनमानस में इस नृत्य द्वारा जन चेतना फैलाने के लिए यह परंपरा शुरू की थी।

कात्ती प्याखँ में नृत्य एवं नाटक प्रारंभ करने से पहले श्री नाट्येश्वर की आराधना में गाई जाने वाली विभिन्न नाट्येश्वर भगवान के गीत इस प्रकार है:

1) म्ये - ।।राग - कामोद।। ।।ताल - चो।।

जय जय शिव नाम लपे नाथं ।।धु।।
सुमिन सुदल नर सिल जत पोले ।।
तिसे नागपति थास वासुकि कोखासे ।।१।।
गसे थुसा देवी पासा खवरखे मुदेस ।

हरषत यात थम नट्या सुर्वेष ।।२।।
नृप श्रीनिवास पितल विनति ।
सुलनर मुनिजन छि सलन माति ।।३।।

2) म्ये - ।।राग - माल।। ।।ताल - चो।।

नमो नित्यनाथ महेश्वर त्रिभुवनया नाथ है ।
नन्दी भृन्दी गणेश कुमार हरगण संग हे ।।१।।
भुषण व नागन सोहाल वसति भुसान है ।।
त्रिनयन शशि शिर माथे जटा गंगाधरी हे ।।२।।
ओधय बाघम्बर अंग विभूति लगई हे ।।
त्रिशूल डम्बरू लिये हाथ वृषभ चढाई है।।३।।
कहीव नेपाल वछल दुर्गा रत्न रंग है ।।
नवरस नाथ ईश्वर देओ दरसन हे ।।४।।

नेवारी शास्त्रीय संगीत विधा के जितने भी प्रकार के गायन है उन सभी की शुरुआत नाट्येश्वर भगवान की आराधना से ही की जाती है, चाहे वह गायन हो या वादन या नृत्य। उपरोक्त उल्लेखित रागों में निबद्ध रचना हरिमान श्रेष्ठ द्वारा लिखित 'कात्ती प्याखँ' पुस्तक से ली गई है। इन रचनाओं में भगवान शिव के गुणगान एवं उनका वर्णन किया गया है तथा उनकी शक्ति एवं भक्ति की आराधना करने की बात की गई है।

पारंपरिक कात्ती नृत्य गायन तथा वादन पर पूर्णतः निर्भर नृत्य है। नृत्य को वर्तमान समय में ललितपुर के कृष्ण मंदिर के प्रांगण दबली(स्टेज) पर प्रस्तुत किया जाता है। इस नृत्य में प्रत्यक्ष रूप से गायन तथा वादन का प्रयोग किया जाता है। इस नृत्य में कई प्रकार के नेवारी वाद्यों का प्रयोग किया जाता है जैसे- ताः, बबूचा(भ्याली), खिं, भुस्याः, धाः, ज्वः नगडा, दमोखिं, मृदंग, प्वंगा, मुहालि, इत्यादि।

4:2:2 लाखे प्याखँ (नृत्य)

नेवारी संस्कृति में ‘लाखे नाच’ अति प्रचलित नाच माना जाता है। लाखे नाच को प्रत्येक वर्ष में एक निश्चित समय में प्रस्तुत किया जाता है। संपूर्ण नेवारी वस्तियों में लाखे नाच का समय अधिकतर सावन कृष्ण चतुर्दशी से भाद्र महीना की कृष्ण जन्माष्टमी के दिन तक होता है। लाखे का स्वरूप देखने में भयानक होता है क्योंकि यह राक्षस गण में आता है। लाखे नाच के बारे में कई किवदंतीयां नेवारी समाज में उल्लेखित है। लाखे नाच के भी कई नाम है जैसे- मजिपा लाखे, मिप्वाः लाखे, हयाउँ लाखे,

तुयुम्ह लाखे, याकः लाखे, छ्याक लाखे, मीपु लाखे, मिच्या लाखे आदि। काठमांडू के मजिपा लाखे राक्षस गण का होते हुए भी उसका प्रेम, बलिदान और त्याग के कारण शांत भैरव के रूप में मानते आए हैं। नेवारी संस्कृति में भैरव को शिव भगवान का स्वरूप मानते हैं। राक्षस को नेवारी बस्तियों का रक्षक माना जाता है। किवदंती अनुसार राक्षस को बच्चों के प्रति अति प्रेम भावना होती है इसलिए बुरी आत्मा तथा शक्ति से सुरक्षित रखने की जिम्मेवारी उन्होंने ली थी।

ललितपुर के दाफा गुरु राजेंद्र महर्जन के अनुसार लाखे प्राचीन समय में उपत्यका में बाहर से तलेजू भवानी भगवान के साथ उपत्यका में एक छोटे बच्चे के रूप में प्रवेश किया था, जो कि राक्षस गण का था। उस बच्चे को ला(मांस) और खें(अंडा) खाने में ज्यादा रुचि थी। इसलिए वह बच्चा मांस और अंडा खाने के लिए लोगों के कृषि कार्य को आसानी से खत्म कर देता था। राक्षस गण के इसी बच्चे से ला और खें शब्द से 'लाखे' शब्द की उत्पत्ति हुई थी ऐसा माना जाता है। नेवारी परंपरा में अनेक प्रकार के नामों के लाखे देखने को मिलते हैं। प्रत्येक की किवदंती अलग-अलग है, प्रत्येक लाखे में पहने हुए मुखौटा की आकृति, नाचने की शैली में फर्क पाया गया है। परंतु नेवारी परंपरा में लाखे नृत्य को सबसे ज्यादा मनोरंजनात्मक नृत्य के रूप में पसंद करते हैं। संगीतज्ञ गणेश प्रसाद लाछि के अनुसार लाखे नृत्य की शुरूआत के विषय को लेकर कई तथ्यों का अनुमान किया जाता है जैसे- लाखे नृत्य मल्लकाल के राजाओं के समय से प्रारंभ हुआ था। कोई नुवाकोट स्थान के ठकुरी राजा ने उपत्यका में इसका चलन प्रारंभ किया था तो सिम्रोनगढ के राजा हरिसिंह, देव तलेजु भवानी को उपत्यका लेकर आने के समय लाखे को भी साथ में लाएं ऐसी मान्यता भी है। विदेशी विद्वान डानिइत राइट ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि लिच्छवि कालीन राजा गुणकामदेव के शासनकाल से पहले ही लाखे नृत्य प्रचलन में था। संभवतः उचित शोध करें तो लिच्छवि काल से पूर्व भी कुछ उपलब्ध हो सकता है। संगीतज्ञ गणेशराम लाछि का कहना है कि उपत्यका के नेवारी बस्ती थक्काः में लाखे नृत्य का उल्लेख हुआ है वह गुफा अभी भी देखने को मिलती है। वहां रहने वाले लोगों का विश्वास है कि उस गुफा में प्राचीन समय में लाखे रहते थे।

इन सभी तथ्यों के अनुसार लाखे नामक राक्षस का स्वरूप जो दिखने में भयंकर है, उसकी प्राचीन समय से नेपाल उपत्यका में मौजूदगी का अनुमान कर सकते हैं। लाखे राक्षस सर्व साधारण मानव के लिए अच्छा या बुरा जरूर रहा होगा परंतु अच्छाई करे बगैर किसी की जय जयकार तथा उनके ऊपर त्यौहार जात्रा पर्व के रूप में कदापि नहीं करते। जरूर राक्षस होते हुए भी उनके कार्य जनता के प्रति अनुकूल होने के कारण ही वर्तमान समय तक लाखे नृत्य की परंपरा नेवारी समाज में कायम है। लाखे नृत्य के लिए विभिन्न वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। "लाखे नाच में अत्यधिक बल की जरूरत होती है

क्योंकि यह एक राक्षसी नृत्य है इसलिए धिमे और भुस्या वाद्य के साथ ज्यादा नृत्य देखने को मिलता है। नेवारी वाद्यों में से सबसे अधिक आवाज धिमे वाद्य और भुस्या वाद्य में से निकलती है। शायद इसी वजह से इन वाद्यों का प्रयोग किया गया होगा। धिमे और भुस्या वाद्य के अलावा खिं, मग खिं, धा, बाँसुरी एवं वर्तमान समय में कहीं-कहीं बैंड बाजा का भी प्रयोग देखने को मिलता है।"[1]

प्राचीन समय से प्रचलित लाखे नृत्य अब केवल नेवारी समाज में ही नहीं किंतु पूरे नेपाल तथा विदेशों में भी लोकप्रिय बनने में सफल हुआ है। कुछ संगीतज्ञ का कहना है कि कई स्थानों में आर्थिक स्थिति तथा गुथी (संस्था) के समूह के आपसी मेल मिलाप के कारण इस परंपरा में ह्रास आने लगी है, फिर भी नव युवकों की इस नृत्य पर रुचि पड़ने के कारण इस नृत्य का संरक्षित रूप देखने को मिलता है और इन्हीं परंपराओं के कारण नेवारी संगीत को सुरक्षित करने में सहायता प्राप्त हो रही है।

4:2:3 विभिन्न प्रकार के द्यः प्याखँ(नृत्य)

नेवारी संगीत के नृत्य विभाग में विभिन्न द्यः प्याखँ अर्थात् भगवान के स्वरूप को मुखौटा(मास्क) पहनाकर नृत्य को प्रस्तुति करने की परंपरा है। द्यः प्याखँ प्राचीन समय की तुलना में बहुत ही निम्न है किंतु वर्तमान में काठमांडू उपत्यका के काठमांडू, भक्तपुर तथा ललितपुर की नेवारी बस्ती में इसका प्रचलन देखने को मिलता है। नेवारी द्यः प्याखँ को समूह में प्रस्तुत किया जाता है। इस नृत्य को बारह वर्ष में या छः वर्षों में या एक वर्ष में अथवा छः महीनों में एक बार प्रस्तुत किया जाता है।[2] संपूर्ण नृत्य परंपरा विभिन्न राज्य काल में अलग-अलग किवदंती पर आधारित है। वर्तमान में भी द्यः प्याखँ को विश्वास पूर्वक विभिन्न जात्रा पर्वों के समय में प्रस्तुत करने की परंपरा है। उपत्यका के विभिन्न स्थानों में प्रचलित द्यः प्याखँ में से कुछ प्रचलित द्यः प्याखँ इस प्रकार है:

4:2:3:1 किलागल देवी प्याखँ

काठमांडू जिला में इंद्र जात्रा के अवसर पर विभिन्न प्रकार के नाच गान तथा नृत्य नाटिका प्रस्तुत करने का प्रचलन है। विद्वानों के मतानुसार लिच्छवि काल में ही धार्मिक नृत्य का प्रचलन प्रारंभ हुआ है। मल्ल काल में आते-आते कई प्रकार के नृत्य प्रसार प्रचार में आ चुके थे। उपत्यका में प्रचलित नृत्य प्रकार केवल देव देवियों को प्रसन्न करने के लिए ही नहीं किंतु अपने स्थान पर संकट समय उद्धार की आशा से देव देवियों का आह्वान करके एवं उनकी साधना करके नृत्य करने की परंपरा चली आई है। इन्हीं

1. https://www.youtube.com/watch?v=MrNkmFAFCfI/dt-24/03/2022
2. महर्जन, राजेंद्र/ हाम्रो सांस्कृतिक पहिचान तथा परंपरागत बाजाहरू/ p-86

परंपरा में से काठमांडू में प्रचलित इंद्र जात्रा के समय प्रस्तुत की जाने वाली किलागल का देवी नाच भी एक है।

विद्वानों का मानना है कि इस नृत्य नाटिका से संबंधित एक हस्तलिखित ग्रंथ उपलब्ध है जिसमें राजा प्रताप मल्ल के नाम का उल्लेख किया गया है, जिससे यह कहना उचित होगा कि किलागल का देवी नाच राजा प्रताप मल्ले के समय से प्रचार में है।[(1)] यह नृत्य किलागल टोल 'विजयपुननी चौक' में प्रत्येक वर्ष गढे मंगल यानी श्रावण कृष्ण चतुर्थी के दिन से सिखाया जाता है और करीब एक महीने तक सिखाने के बाद भाद्र महीने में गणेश चतुर्थी के दिन से उसका प्रस्तुतिकरण आरंभ होता है। इंद्र जात्रा के अवसर पर एक सप्ताह तक नृत्य प्रदर्शन किया जाता है। "इस देवी नृत्य नाटिका में कुल सात पात्र होते हैं जैसे- भैरव, कुमारी, चंडी, दैत्य, कंकाल, वेताल और ख्याक। यह देवी नृत्य राग में निबद्ध गायन तथा वादन समान रूप से प्रस्तुत किया जाता है। नृत्य की शुरूआत मालश्री राग से और अंत बलारी राग से होता है। नृत्य के बीच में अन्य राग गाए जाते हैं जैसे भूपाली, सोरथ, धनाश्री, चर्या, मंगल इत्यादि। गीत के शब्द संपूर्णता भक्ति प्रधान होते हैं, जिसमें देव देवियों के गुणगान एवं उनकी महिमा गाई जाती है। इस देवी नाच में विभिन्न नेवारी वाद्य जैसे खिं, धाः, नाय् खिं, दंगः खिं, पोङ्गा, छुस्या, ताः इत्यादि बजाए जाते हैं।"[(2)]

इस नृत्य नाटिका को संपूर्णतः गायन तथा वादन की सहायता द्वारा दिखाया जाता है। नेवारी संगीत समूह को संचालन करने में आय स्रोत की ज़रूरत पड़ती है। लेखक डॉ. साफल्य अमात्य के मतानुसार किलागल के देवी नृत्य के लिए प्रत्येक वर्ष सरकार की तरफ से आर्थिक सहयोग मिलता है जो अन्य नृत्य प्रकार की तुलना में संतोषजनक माना जाता है। यदि इसी प्रकार प्रत्येक स्थानों में प्रदर्शन किए जाने वाले संगीत को व्यवस्थित आर्थिक पूंजी की सहायता हो तो अपनी संस्कृति एवं परंपरा को बचाए रखने में मदद मिल सकती है।

4:2:3:2 भक्तपुर नगर का महाकाली प्याखँ(नृत्य)

भक्तपुर नेपाल का सबसे छोटा जिला है जिसमें कला और संस्कृति अथाह भरा हुआ है। भक्तपुर जिला मध्यमाञ्चल क्षेत्र के बागमती अञ्चल काठमांडु उपत्यका में अवस्थित हैं। उपत्यका के तीन शहर में से अपनी ही विशेष संस्कृति एवं परंपरा में समृद्ध जिला मध्य काल के 13 वीं सदी से 16 वीं सदी तक लगभग चारसो वर्ष तक राजधानी के रूप में स्थापित शहर रहा।[(3)] मध्यकाल की इस राजधानी शहर में

1. लाछि, गणेशराम/ नेपालमंडलका मुकुंडों नाच/ p-61

2. लाछि, गणेशराम/ नेपालमंडलका मुकुंडों नाच/ p-62
3. जधारी, मुक्तिसुंदर/ महाकाली नाच/ p-25

विभिन्न गायन, वादन तथा नृत्य का अनेक प्रकार प्रचलित होते हुए आए है। वर्तमान में जितनी भी संगीत परंपरा देखने को मिलती है वह सभी प्राचीन समय की ही साधना मानी जाती है। भक्तपुर शहर में विभिन्न नृत्य प्रचलित है जिसमें गायन तथा वादन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भक्तपुर में विभिन्न नृत्य प्रचलित है जैसे भैरव नृत्य, खः नृत्य, बांदर नृत्य इत्यादि। इन नृत्यों में से द्यः प्याखँ महाकाली नाच(नृत्य) का विशेष महत्व है एवं परंपरागत रूप से अलग सी पहचान मानी गई है। महाकाली नाच में मुखौटा(मास्क) पहनकर समूह में नृत्य किया जाता है। इस नाच में कुल चौदह लोग होते है। अन्य महालक्ष्मी, कुमारी, वेताल, ख्याक, कवं, जंगली भूत भैरव, दैत्य, शेरसिंह, मयूर, मानिस, रांगो(महिषासुर) और इन्द्र के रूप में नृत्य किया जाता है। इस नृत्य को देवी नाच भी कहा जाता है।

महाकाली नृत्य धार्मिक, ऐतिहासिक, पौराणिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं से भरा हुआ नृत्य है जिसे गण नृत्य भी कहा जाता है। विभिन्न ग्रंथ और पुराणों के आधार पर दैत्य असुरों का संहार करके प्रजा की रक्षा एवं पालन पोषण करने के लिए इन देवताओं का प्रागट्य हुआ था। इसी घटना की खुशियाली के अवसर पर इस नृत्य का प्रस्तुतीकरण किया जाता है।[(1)] इस नृत्य के प्रस्तुतीकरण के लिए विभिन्न मुखौटा, वेशभूषा, गरगहना, हात हरियार का प्रयोग किया जाता है। मुक्तिसुंदर जधारी द्वारा लिखा हुआ 'महाकाली नाच' पुस्तक में प्राप्त उल्लेख के अनुसार इस नृत्य में विभिन्न वाद्यों का प्रयोग होता हैं जैसे- कोटा खिं, नगाड़ा, पछिमा, भूस्या, सिछ्याय, झ्याली, ताः, घडीघण्टा, मालीङ्ग, पोङा, बाँसुरी, डमरू इत्यादि। इस महाकाली नाच में सर्वप्रथम पछिमा वाद्य बजाया जाता है। फिर उसके बाद कोटा खिं के बजाते ही नृत्य के सारे पात्र रंगमंच पर उपस्थित होते है और नृत्य एवं अपने प्रस्तुतीकरण के लिए तैयार होते है। नाच के विज्ञों के अनुसार महाकाली नृत्य विशेषतः अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार, पापिष्ट, क्रूर, असुरों के संग लड़ाई और विजय प्राप्ति के उत्सव के आधार पर किया जाता है। इस नृत्य में लड़ाई, क्रोध, भय, मांगलिक भाव को व्यक्त करने के लिए वाद्य के अनेक प्रकार के बोल द्वारा साथ संगत की जाती है। इस प्रकार परंपरागत महाकाली नृत्य को संपन्न करने में नेवारी वाद्य वादन की मुख्य भूमिका देख सकते है।

4:2:3:3 ललितपुर गं प्याखँ(नृत्य)

नेवारी जाति का बाहुल्य बसोबास क्षेत्र उपत्यका के ललितपुर जिला में भी वर्षभर में अनेक जात्रा पर्व, त्यौहार, नृत्य एवं गायन की प्रस्तुति की जाती है। इस प्रस्तुति के लिए गुरु द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है और सफलतापूर्वक प्रस्तुतीकरण करके अपनी प्राचीन संस्कृति को संरक्षण एवं निरंतरता देने में मदद की जाती है। प्राचीन समय से चली आई हुई संस्कृति एवं परंपरा ही उस स्थान की पहचान होती है।

1. जधारी, मुक्तिसुंदर/ महाकाली नाच/ p-38

अपने स्थान का परिचय देने में ललितपुर में वर्षभर में किए जाने वाली सांस्कृतिक प्रस्तुतियों से यह भलीभाति परिलक्षित होता है। इन्हीं पूरे वर्ष में मनाई जाने वाली इस परंपरा का अनुसरण करते हुए दशहरा के पावन अवसर पर गं प्याखँ(नृत्य) प्रस्तुत किया जाता है। "गं प्याखँ मध्य काल के राजा श्रीनिवास के समय से प्रचलन में आया है। ऐसा माना गया है कि राजा श्रीनिवास को एक रात सपने में अष्टमातृका गण द्वारा दरबार के सामने नृत्य प्रस्तुत किया जा रहा है। जब राजा को यह सपना आया तब उसने अपने गुरु की राय लेकर गं प्याखँ की शुरुआत की थी। प्रजा के कल्याण हेतु श्रीनिवास मल्ल राजा ने यह नृत्य परंपरा की शुरुआत की थी।"[(1)]

"इस गं प्याखँ में ब्रह्मायणी, महेश्वरी, कुमारी, वैष्णवी, बाराही, इंद्रायणी, चामुंडा और महालक्ष्मी अपने अपने मुखौटा पहनकर अलग अलग वाद्यों के बोल पर यह नृत्य प्रस्तुत करते हैं। इस नृत्य में अन्य स्थानों के गं प्याखँ की तरह बलि देने की प्रथा बिलकुल नहीं है और मुखौटा भी भयंकर नहीं होता, यह मुखौटा दिखने में अतिसुंदर होता है।"[(2)] नृत्य गुरुओं के अनुसार इस नृत्य को सिखाते समय प्रारंभ के चार दिन केवल बोल के आधार पर बिना वाद्य नृत्य सिखाया जाता है और उसके बाद वाद्य के साथ यह नृत्य सिखाया जाता है। इस नृत्य में वाद्य को बजाने के लिए गुरु से आशीर्वाद प्राप्त करने से पूर्व वाद्य लिया जाता है और फिर उसे बजाया जाता है। इस नृत्य में पंचताल, पोंगा तथा ताः वाद्य बजाया जाता है। नेवारी संगीत की नृत्य परंपरा में प्राचीन तांत्रिक मंत्र का प्रयोग करने की परंपरा है, जिससे इस नृत्य को सफलतापूर्वक संपन्न करने में मदद मिलती है। इस प्रकार उपत्यका तथा उपत्यका के बाहर की नेवारी बस्ती में प्राचीन परंपरा को श्रद्धापूर्वक साधना करके संगीत कला की तीनों विधाओं(गायन,वादन और नृत्य) को प्रेम पूर्वक प्रस्तुत किया जाता है। इसी परंपरा के कारण अपने संगीत को बचाने में यह संगीत परंपरा सफल हुई है। नेवारी समाज में प्रचलित अनेक प्रकार के नृत्यों में वाद्य वादन तथा गायन की महत्वपूर्ण भूमिका प्राप्त होती है, जो नेपाल राष्ट्र में ही नहीं अपितु अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपना नाम कायम रखने में सफल हुई है।

---

1. महर्जन, राजेंद्र/ हाम्रो सांस्कृतिक पहिचान तथा परंपरागत बाजाहरू/ p-87
2. लाछि, गणेशराम/ नेपालमंडलका मुकुंडों नाच/ p-111

4:3 नेवारी नाटकों में संगीत

नेवारी परंपरा में विभिन्न क्षेत्रों का विकास पाया गया है। उनमें से नेवारी(नेपालभाषा) नाटकों का काफी विकास हुआ है। नेवारी नाटक का इतिहास लिच्छवि काल में उतना नहीं प्राप्त होता परंतु मल्लकाल में नेवारी नाटक लेखन तथा प्रदर्शन का कार्य व्यापक हो गया था।[1] मल्लकाल में नाटक को मनोरंजन का उच्च पक्ष माना गया। प्रत्येक पर्वों में, कार्यों में, शुभ अवसरों पर एवं निर्माण कार्यों की समाप्ति पर नाटक प्रदर्शन किया जाता था। नेपालमंडल काठमांडू उपत्यका में नाटक की प्रारंभिक मूल भाषा संस्कृत होती थी। तत्पश्चात समय-समय पर मैथिली, नेपालभाषा, बंगाली आदि भाषा में नाटक लिखने की परंपरा विकसित हुई। नेवारो की बाहुल्यता होने के कारण बाद में प्रायः सभी नाटक नेपालभाषा में ही लिखे गए। नाटक प्रस्तुतीकरण के लिए सिखाने वाले गुरु एवं नाटक का प्रस्तुतीकरण करने वाले पात्र एवं उसमें गायक, वादक और नर्तक सभी नेवारी लोग ही होते थे। इसी वजह से धीरे-धीरे नेपालभाषा में ही नाटक लिखने की परंपरा शुरू हुई ऐसा शोधार्थिनी का मानना है।

नेपालमंडल के प्रचलित नाटकों में संगीत की मुख्य भूमिका रही है। प्राचीन समय में नाटक लिखने का उद्देश्य ही प्रदर्शन के लिए होता था। नाटकों के प्रस्तुतीकरण द्वारा शिक्षा देने का विधान नहीं था। प्रदर्शन के लिए नाटक लिखे जाने के कारण नाटक में संगीत का अधिक महत्व होने लगा। नाटक की शुरुआत से लेकर अंत तक प्रत्येक लोग सहभागी होते थे। संगीत के ज़रिए ही संपूर्ण मंच को बांध के रखने में सक्षम होता है। विभिन्न वातावरण सृजना करने के लिए एवं भाव को दर्शाने के लिए संगीत का प्रयोग किया जाता था, जिससे नाटक के मनोरंजन को चरम बिंदु तक पहुंचा सके। इसलिए संगीत के बगैर नाटक असंभव सा माना जाता था।

प्राचीन नेवारी नाटकों में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न गीतों के प्रकार निम्नलिखित है[2]:

1) शून्य म्ये

2) नन्दि म्ये

3) देशवर्णना/ राजवर्णना म्ये

4) आरती म्ये

5) मेमेगु म्ये

---

1. प्रजापति, सुभाषराम/ पुलांगु नेपालभाषा नाटकया संगीत पक्ष/ p-1

2. प्रजापति, सुभाषराम/ पुलांगु नेपालभाषा नाटकया संगीत पक्ष/ p- 18-20

शून्य म्ये: नाटक प्रदर्शन के प्रारंभ में दबली(स्टेज) पर प्वं खिं वाद्य के साथ गाया जाने वाला गीत शून्य म्ये (गीत) होता है। इस गीत का मुख्य उद्देश्य दर्शकों को इकट्ठा करना और कलाकारों को नाटक प्रदर्शन के लिए तैयार होने का समय देना है। शून्य म्ये में सर्वप्रथम भगवान गणेश की आराधना की जाती है।

उदाहरण:

।। शून्य म्ये ।। ।। रागः भैरव ।।

प्रथमस भजन याय , सिद्धि गणेश्वरं।

नेवारी संगीत में कोई भी शुभ कार्य, पूजा आदि करने से पहले गणेश भगवान को ही प्रार्थना करने की प्रथा है। इसलिए नाटक प्रदर्शन से पहले गणपति का ही भजन गाया जाता है।

नंदी म्ये: शून्य म्ये के बाद नाटक में नंदी गीत गाया जाता है। नेवारी संगीत में नासः द्यः संगीत के गुरु माने जाते है। इसलिए गायक एवं वादक अपनी प्रस्तुति शुरू करने से पहले नासः द्यः की प्रार्थना करते है। इसी से संबंधित गीत को नंदी गीत कहा जाता है। कुछ प्राचीन नाटकों में नंदी गीत गाने से पहले नासः द्यः के संस्कृत भाषा में स्त्रोत्र गान भी गाए जाने की परंपरा प्राप्त होती है।

देशवर्णना/ राजवर्णना म्ये: नाटक प्रदर्शन के क्रम में नासः द्यः की स्तुति के बाद अपने राज्य के राजा और राज्य के वर्णन का गीत गाया जाता है। राजा के वर्णन में उनकी बुद्धिमत्ता, शूरवीरता, प्रजा पालक, बलवंता एवं असल कार्यों का उल्लेख किया जाता है। मल्लकाल के नाटकों में विशेष रुप में नेपाल मंडल के काठमांडू, भक्तपुर, ललितपुर और आस पास के छोटे-मोटे राज्यों का ही वर्णन पाया गया है।

आरती म्ये: नाटक प्रदर्शन के अंत्य में पुनः नासः द्यः की स्तुति रचना को आरती गीत कहते हैं। इस आरती गीत में नाटक के सारे कलाकार गण मंच पर खड़े होकर दोनों हाथों को जोड़कर यह गीत गाते हैं।

मेमेगु म्ये: नाटक के बीच में विभिन्न भावों को प्रदर्शित करने वाले गीत को मेमेगु म्ये कहा गया है। प्राचीन नाटकों के शोधार्थियों का कहना है कि संवाद से ज्यादा गीत एवं नृत्य को अधिक महत्व दिया गया है।

इस प्रकार नेवारी संगीत में गायन, वादन, तथा नृत्य के साथ साथ कम ज्यादा रूप में नाटकों का प्रयोग भी वर्तमान समय में देखने को मिलता है। उसमें संगीत के महत्व के बारे में जान सकते है।

नेवारी जाति में त्यौहार, परंपरा, जात्रा पर्व को अत्यंत महत्व दिया जाता है क्योंकि यह प्राचीन समय से निरंतर चले आ रहे हैं उसी की वजह से नेवारी संगीत की भी निरंतरता और अभ्यास हो पाया है। दोनों ही एक दूसरे के साथ बंधे हुए हैं यदि एक की कमी हुई तो दूसरा फीका पड़ जाता है। वर्तमान में प्राचीन समय की तुलना में संगीत गायन, वाद्य वादन, नृत्य तथा नाटक में कमी हो रही है फिर भी नेवारी संगीत समूह की एकरूपता और अपनी संस्कृति एवं संस्कार के प्रति मोह के कारण वर्तमान में भी यह परंपरा प्रत्यक्ष देखने को मिलती है। अपनी कला संस्कृति, संगीत को उच्च स्थान में रखने की क्षमता सराहनीय है।

इस प्रकार शोधार्थिनी ने चतुर्थ अध्याय में नेवारी संगीत का संबंध नेवारी जात्रा उत्सव एवं परम्पराओं के साथ दिखाने का प्रयास किया है। नेवारी संस्कृति में नृत्य एवं नाटक का भी बड़ा महत्व है इसलिए नृत्य एवं नाटक में नेवारी संगीत की भूमिका को भी उजागर करने कि कोशिश की गई है।